ज्ञान तथा तर्क -संकल्पना एवं अन्तः सम्बन्ध

*** डॉ0 विनीता श्रीवास्तव,**

ज्ञान की पिपासा मानव में आदिकाल से ही विद्यमान रही है यही कारण है कि वह 'सृष्टि अथवा **'ब्रह्माण्ड'** के विभिन्न तत्वों की वास्तविकता को जानने का प्रयास निरन्तर करता रहा है। इसी सत्य की खोज की इच्छा ने मानव को निरन्तर ज्ञान एवं विचार की उत्पत्ति के प्रति आकर्षित किया ।

सत्य की खोज के लिए हमें अनेक तर्क प्रस्तुत करने पड़ते हैं क्योंकि बिना तर्क के वास्तविकता को जानना दुष्कर ही नहीं नामुमकिन भी होता है। यही कारण है कि हमें बहुधा विभिन्न दार्शनिक विचारों का आदान –प्रदान करना पड़ता है। इसीलिए दर्शनशास्त्र को **''ज्ञान के अध्ययन''** का शास्त्र भी कहा जाता है। इस ''ज्ञान के अध्ययन'' के चार प्रमुख आयाम हैं –

(1) ज्ञान क्या है ?

(2) ज्ञान के साधन क्या हैं ?

(3) ज्ञाता एवं ज्ञान के बीच क्या सम्बन्ध है ?

(4) ज्ञान की सत्यता की परख कैसे की जाये ?

भारतीय विचारकों ने आरम्भ से ही परम तत्व के रहस्य को स्वीकार किया और उसे समझने के लिए अनेक मार्ग अपनाये। इस सन्दर्भ में यह भी माना गया है कि शिक्षा और ज्ञान का अटूट सम्बन्ध है। इसीलिए ज्ञान की एक विशिष्ट शाखा के रूप में **''ज्ञान मीमांसा''** का क्षेत्र काफी विस्तृत है।

सामान्य शब्दों में कहा जाय तो यह ज्ञान मीमांसा ही है जो मानव को यह आश्वासन देती है कि वह जो कुछ सीख रहा है वह सत्य है। इसके लिए आवश्यक है कि हम ज्ञान के विकास के कार्य में संलग्न रहें। सामान्यतः ज्ञान को जानने की प्रक्रिया के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। परन्तु यह 'जानना' योग्यता, सूचना, अथवा परिचय आदि अन्य अर्थों का सूचक हो सकता है । ज्ञान के इन रूपों को सामान्य ज्ञान के रूप में, स्वीकार किया

* प्रवक्ता, बी0 एड0 विभाग, दयानन्द बछरावाँ पी0जी0 कालेज, बछरावाँ, रायबरेली।

जाता है। यह सामान्य ज्ञान विभिन्न प्रकार की ' **आदतों या अनुकरण** पर आधारित रहता है। इसके अतिरिक्त यह ज्ञान बहुत कुछ अतीत से सहज रूप में प्राप्त परम्परा एवं रीति रिवाजों का हिस्सा होता है। इस ज्ञान की सत्यता का आधार केवल विश्वास रहता है।

अतः माना जाता है कि परम्परा आदि से प्राप्त अथवा अपने स्वयं के अपरीक्षित अनुभवों, विश्वासों आदि से सम्बद्ध ज्ञान को तब तक ज्ञान नहीं माना जा सकता जब तक इसे निश्चित तर्कों अथवा प्रमाणों के आधार पर सत्य न सिद्ध कर दिया जाय। भारतीय संस्कृति में इस प्रकार के ज्ञान को प्रमा कहा गया है। प्रमा से अभिप्राय है – प्रमाणित ज्ञान ।

इस प्रकार के प्रमाणित ज्ञान को मुख्यतः दो रूपों में जाना जाता है :–

- जानने के 'साधन' के रूप में – (जिससे जाना जाता है)
  (ज्ञायते अनेन इति ज्ञानं)
  यथा– हिन्दू धर्म एवं संस्कृति का ज्ञान (ज्ञान मीमांसा) वेदों एवं उपनिषदों से ज्ञात होता है।
- जानने की क्रिया के फल के रूप में – (जो जाना जा चुका है)
  (ज्ञातम इति ज्ञानम)
  यथा–''भगवद्गीता के अध्ययन से यह जाना जा चुका है कि आत्मा अमर है।''
  विवेचनात्मक रूप से ज्ञान से अभिप्राय है भ्रमरहित, निश्चित तथा प्रमाणित ज्ञान अर्थात प्रमा जिसकी व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है। '

'तत्तवानुभवः प्रमा अर्थात (मूल का अनुभव ही प्रमा है)

प्रमा के अर्थ को निम्नलिखित पंक्ति के माध्यम से और स्पष्ट रूप से जाना जा सकता है :–

''तद्धति तत्प्रकारकानुभवो यथार्थः: यथा रजते इदं , रजते इति ज्ञानम् स एवं प्रमेत्युच्यते '' अर्थात्

(जो जहाँ है जैसा है , उसका वैसा ही उसी रूप में अनुभव, यथार्थ

है जैसे जो रजते अर्थात शोभित होता है इसलिए वह रजत है, यह ज्ञान है इसे प्रमा कहा जाता है।

अतः '' यथार्थ '' की यथार्थ रूप में अनुभूति होना ही प्रमा है।

यदि इस प्रकार के प्रमाणिक ज्ञान का विश्लेषण करें तो यह ज्ञात होता है कि ज्ञान साधनों की प्रमाणिकता , प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया , इन्द्रियजनित अनुभव एवं चिन्तन आदि पर निर्भर रहता है। चिन्तन द्वारा आन्तरिक परिस्थितियों का ज्ञान होता है इसे एक प्रकार से अन्तर्दर्शन की प्रक्रिया माना गया है। इस परम्परा में मन अत्यन्त सक्रिय रहता है। इस प्रकार के ज्ञान में अन्तर्सूझ का विशेष महत्व होता है। इस अन्तर्सूझ कौशल के परिणाम स्वरूप ही हम अनेक तर्क प्रस्तुत करते हैं और ज्ञान की प्रमाणिकता को परख कर सत्य जानने का प्रयास करते है। तर्क में हम एक भ्रमात्मक धारणा को लेकर चलते हैं। यह अपने आप में प्रामाणिक ज्ञान का साधन नहीं है बल्कि परिकल्पनाओं के प्रस्तुतीकरण में यह मूल्यवान सिद्ध होता है।

सामान्य अर्थों में इसका अर्थ होता है ' युक्ति अर्थात जब कोई चिन्तक अपने विचारों को सिद्ध करने के लिए अनेक प्रकार की युक्तियों का सहारा लेता है जिससे सत्य को प्रमाणित किया जा सके तर्क कहलाता है। इसका सीधा सम्बन्ध ''समस्या के समाधान से होता है।''

स्पष्ट रूप से चिन्तन का कार्य बुद्धि ही करती है। यह चिन्तन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें पक्ष व विपक्ष दोनों ही उभरते हैं। यह कार्य बुद्धि स्वयं अपने आप से ही करती रहती है। अतः किसी सिद्धान्त के विषय में यह सोचना कि पूर्ण रूप से सत्य की परख कर ली यह एक बहुत बड़ी भूल है। दर्शन का इतिहास हमें यही बताता है । अतः विभिन्न दार्शिनिक सम्प्रदायों में इस भूल को दूर करने के साधन के रूप में देखा गया है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तर्क को विभिन्न कारणों की व्याख्या करने के रूप में स्वीकृत किया जाता है। इसे अपने पूर्व प्राप्त अनुभवों के आधार

पर भी अवलम्बित किया जा सकता है। यही कारण है कि ''परिशुद्धता'' को अच्छे तर्क की कसौटी माना गया है।

तर्क को ''सृजनात्मक चिंतन'' का आधार भी माना जाता है। यही कारण है कि इसे समस्या समाधान के सृजनात्मक रूप में देखा गया है तथा इसे चिन्तन के रूप में भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसीलिए ''ज्ञान मीमांसा '' में तर्क का अपना एक विशिष्ट स्थान है।

आत्मानुभव निरीक्षण तथा तर्क बुद्धि को ज्ञान के महत्वपूर्ण स्त्रोतों के रूप में स्वीकार किया जाता है तथा यह भी स्पष्टतः कहा गया है कि ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण आधार '' ज्ञाता की चेतना अथवा बुद्धि'' है।

भारतीय न्याय दर्शन में स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि जिस वस्तु को कभी प्राप्त न किया गया हो और उस सम्बन्ध में निश्चित रूप से ज्ञान प्राप्त हो गया हो उसके सम्बन्ध में तर्क किया जा सकता है । अतः सन्देहयुक्त विषय को निश्चित रूप से जानने के लिए तर्क किया जा सकता है। परन्तु हम यह भी जानते हैं कि केवल तर्क के द्वारा सत्य तक नहीं पहुचा जा सकता – **''नैषा तर्केण मतिपनेया (कठोपनिषद 1–2–9)** फिर भी यह एक स्वीकृत तथ्य है कि तर्क प्रमाणों का सहायक है– प्रमाणानामनुग्राहक स्तर्कः **(न्याय भाष्य–1–1–1)** इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि तर्क में केवल स्वयं का मनन एवं विश्लेषण ही सीमित नहीं होता बल्कि दूसरों के विचारों को भी इसमें सम्मिलित किया जाता है। भारतीय परम्परा में इसे **'' आन्वीक्षिकी विद्या ''** के नाम से भी जाना जाता है।

वस्तुतः ''तर्क '' ज्ञान प्राप्ति की बुद्धिवादी परम्परा से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि इसका ज्ञान के साथ अन्तः सम्बन्ध काफी सुदृढ़ है।

जैसा कि हमें ज्ञात है कि ज्ञान प्राप्त करने की मुख्यतः तीन स्थितियां निर्धारित की गयी हैं – श्रवण , मनन तथा निदिध्यासन । इन तीन स्थितियों में चिन्तन की अवस्था में विचार विमर्श के दौरान तर्क की स्थिति बनी रहती है। अतः तर्क एक प्रकार से विवेकपूर्ण चिंतन का आधार है

जिससे हम अपने ज्ञान को वैध बनाते हैं।

ज्ञान एवं तर्क के अन्तःसम्बन्ध पर यदि हम विस्तारपूर्वक दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट होता है कि ज्ञान की प्रत्येक शाखा का सम्बन्ध अन्ततः तर्क से जुड़ा हुआ है। ज्ञान एवं तर्क के अन्तः सम्बन्धों के आधार पर ही हम किसी वस्तु का विश्लेषण करने समर्थ होते हैं तथा किसी विषय पर सचेत होकर अपनी टिप्पणी करने के योग्य होते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में पाठ्यक्रम , शिक्षण विधियों, पाठ्य–सामग्री के चयन आदि में ज्ञान एवं तर्क का आपसी सम्बन्ध अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसके आधार पर ही हम एक बालक को विचारशील , एवं तर्कयुक्त व्यक्तित्व के रूप में विकसित करने में सफल होते हैं। ज्ञान एवं तर्क ही बच्चे के संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया को आधार प्रदान करता है तथा बौद्धिक स्तर को उत्तम बनाता है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि तर्क शिक्षा का अपरिहार्य अंग है तथा ज्ञान इसका आधारभूत स्तम्भ है । अतः तर्क एवं ज्ञान के अन्तः सम्बन्ध के महत्व को समझते हुए हमें वर्तमान शिक्षा पद्धति को इस पर आधारित करने का प्रयास करना चाहिए, तभी हम व्यक्ति की उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।